RNI/MPHIN/2013/61414

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये
UGC Care Listed

ISSN 2278-0327
Peer Reviewed
Refereed Journal

ज्योतिर्वेद - प्रस्थानम्

संस्कृत वाङ्मय की शोधपत्रिका - संस्कृत छात्रों की मार्गदर्शिका

नवम वर्ष, चतुर्थ अंक

सितम्बर-अक्टूबर 2020

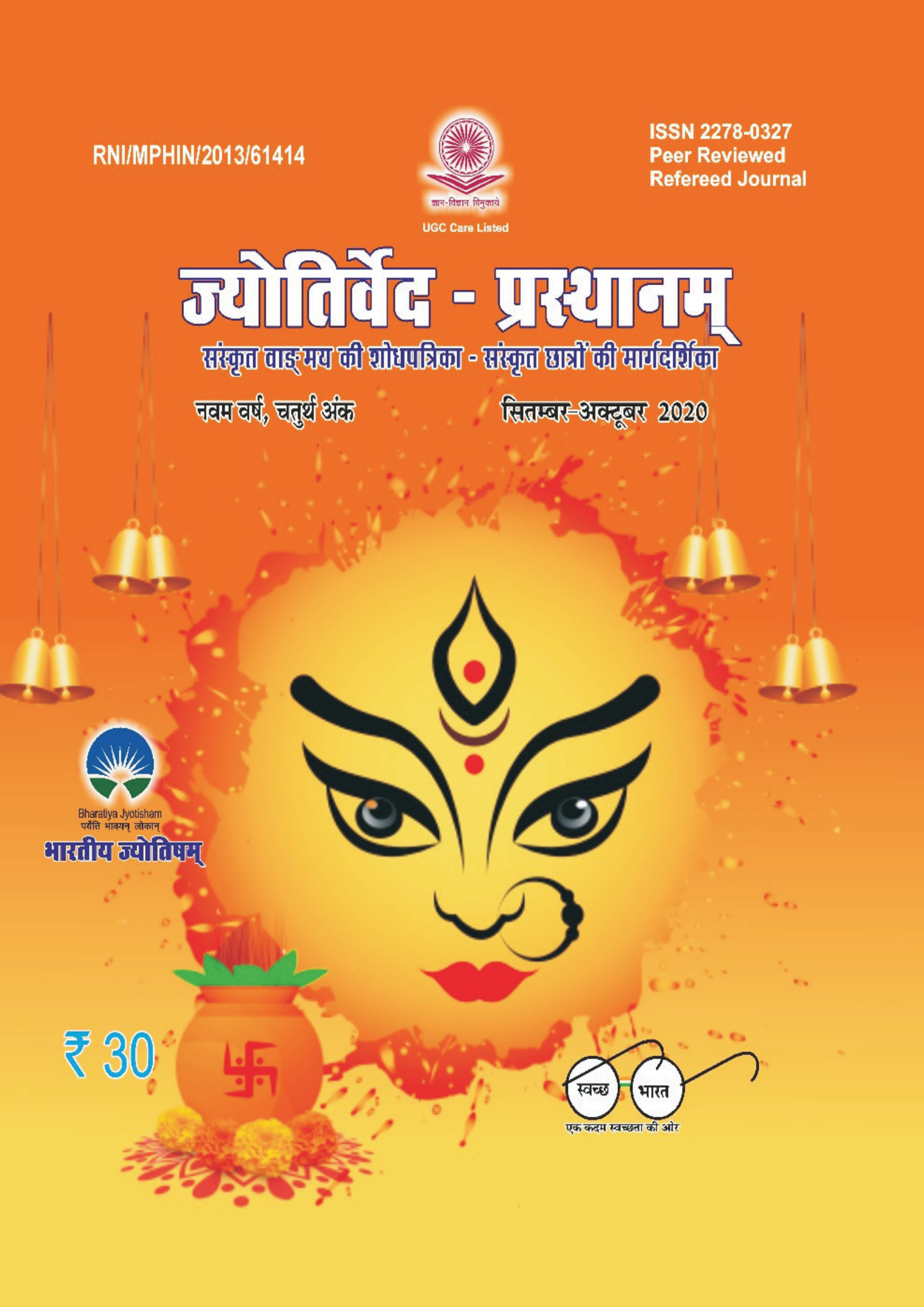

Bharatiya Jyotisham
पर्यैति भावयन् लोकान्
भारतीय ज्योतिषम्

₹ 30

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

विषय-सूची

क्र.	लेख विषय	लेखक	पृ.सं.
1.	वेद के अर्थावबोध में वेदाङ्गज्योतिष की भूमिका	डॉ. देशबन्धु	02
2.	ज्योतिष का प्राचीन इतिहास एवं ब्रह्मगुप्त विमर्श	राघवेन्द्र त्रिवेदी	05
3.	भूगोल एवं पर्यावरण के आलोक में भारतीय वास्तुशास्त्र	डॉ शुभम् शर्मा	09
4.	प्रतिमा-प्रमाण, तालमान एवं रूपविधान	डॉ.आशीष कुमार चौधरी	12
5.	वैदिक साहित्य में ज्योतिष का स्वरूप, एक परिचय	डॉ. सुरेश कुमार बैरागी	16
6.	पातञ्जल-योगदर्शन-प्रथमपाद में वर्णित चित्त को समाहित करने के उपाय : एक अवलोकन	दीपक बन्देवार	21
7.	प्राचीन काव्य कविताओं से संस्कृतवाङ्मय की अनन्यता	डॉ. कृष्ण चन्द्र पण्डा	25
8.	पूर्वमीमांसा दर्शन के उद्भव एवं विकास में 'मिथिला' का योगदान	ओम प्रकाश झा	28
9.	संस्कृत-सुभाषित साहित्य में भाग्य की अवधारणा	मुरली धर पालीवाल	32
10.	पोस्ट लॉकडाउन क्लासरूम प्रबंधन की चुनौतियां और समाधान	एस. अकिला, रेणु दास	37
11.	भवभूति एवं उनका उत्तररामचरितम् संक्षिप्त परिचय	डॉ. जया प्रियदर्शिनी	42
12.	स्वातन्त्र्य-अधिकार की वैदिक अवधारणा	मानसी	44
13.	द्वासुपर्णा की समीक्षा	रूपा कुमारी	50
14.	सप्तसिन्धु के भौगोलिक सन्दर्भ	पवन	57
15.	'श्रीगुरुमहाराजचरितम्' महाकाव्य की साम्प्रत काल में उपादेयता	मीनाक्षि कुमारी आर्या	62
16.	संस्कृत वाङ्मय में निहित मानवीय मूल्य 'यम' और 'नियम' के विशेष सन्दर्भ में- डॉ- अच्छेलाल		65
17.	गाँधी जी के आत्मनिर्भरता संबंधी विचार : आधुनिक भारत के लिए सरोकार-डॉ. संजय कुमार		68
18.	महाकाव्यकालीन ग्रन्थों का परिचय: एक समीक्षात्मक अध्ययन	वेदानन्द	72
19.	मधुपक अनुदित काव्य दुर्गासप्तशती मैथलीसुधा	किरण मिश्रा	74
20.	श्रीहनुमच्चरित्रवाटिका महाकाव्य में छन्दविवेचन	दयाशंकर शर्मा	76
21.	तनाव-प्रबंधन एवं योग	डॉ साधना दौनेरिया	78
22.	समकालीन हिन्दी साहित्य और स्त्री विमर्श के कुछ अनुत्तरित प्रश्न	आशुतोष शुक्ल	81
23.	न्यायदर्शन में प्रत्यक्ष प्रमाण की अवधारणा	डॉ. कृष्ण मुरारी मणि त्रिपाठी	83
24.	20 वीं सदी के उतरार्द्ध में महिलाओं की समाजिक एवं राजनीतिक स्थिति सुनिता कुमारी		87

पुनरीक्षण समिति

प्रो. विद्यानन्द झा
पूर्वप्राचार्य - केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय
भोपाल परिसर, भोपाल

प्रो. क्षेत्रवासी पण्डा
अध्यक्ष - तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति विभाग
बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल

प्रो. भारतभूषण मिश्र
निदेशक - केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय
क.जे.सौमेया विद्यापीठ, मुम्बई

प्रो. हंसधर झा
अध्यक्ष - ज्योतिषविभाग
केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, भोपाल परिसर

डॉ. सनन्दन कुमार त्रिपाठी
अध्यक्ष - साहित्यविभाग
केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, भोपाल परिसर

डॉ. अशोक थपलियाल
अध्यक्ष - वास्तुविभाग
श्रीलालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत वि.वि., नई दिल्ली

ISSN 2278 - 0327

संस्कृत-सुभाषित साहित्य में भाग्य की अवधारणा

मुरली धर पालीवाल
सहायक आचार्य
संस्कृत विभाग
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

भाषासु मुख्या मधुरा दिव्या गीर्वाणभारती।
तस्माद्धि काव्यं मधुरं तस्मादपि सुभाषितम्।।[1]

मधुरतमा भाषा संस्कृत की सर्वाधिक मधुरता सुभाषितों में प्राप्त होती है। 'सुष्ठु भाषितम् सुभाषितम्' अर्थात् जो श्रेष्ठ और नीतियुक्त वचन हैं, वे सुभाषित हैं। सुभाषित संस्कृत साहित्य के नवनीत समान हैं। ये शाश्वत जीवनमूल्य हैं, जो मनुष्य- जीवन के सर्वविध कल्याण हेतु पथ-प्रदर्शक होते हैं। इसी महत्त्व के कारण प्राचीनकाल से संस्कृत-साहित्य में सुभाषितों के प्रणयन और संचयन की परम्परा अद्यतन चली आ रही है। वेदव्यास मुनि द्वारा महाभारत में सुभाषितों या सूक्तियों के संचय करने का निर्देश भी किया गया है-

सुव्याहृतानि सूक्तानि सुकृतानि ततस्तः।
संचिन्वन् धीर आसीत् शिलाहारी शिलं यथा।।[2]

संस्कृत-साहित्य का प्राचीनतम उपलब्ध सुभाषितग्रन्थ सुभाषितरत्नकोष है। इसका अपर नाम कवीन्द्रवचनसमुच्चय भी है। इस ग्रन्थ का प्रथम संकलन विद्याधर पण्डित द्वारा 1100 ई. के लगभग किया गया था।[3] इसके बाद सदुक्तिकर्णामृत, सूक्तिमुक्तावली, शार्ङ्गधरपद्धति, सुभाषितावली आदि अनेक ग्रन्थों की सुदीर्घ परम्परा प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त 'नीतिशतक' जैसे मौलिक सुभाषित ग्रन्थों के प्रणयन की भी परम्परा सतत प्रवाहमान है।

इन सुभाषित ग्रन्थों में विविध विषयों पर विविध ग्रन्थों से आहरित नीतिसमन्वित और शिक्षाप्रद पद्यों का संकलन प्राप्त होता है। इन्हीं विविध विषयेां के अन्तर्गत भाग्य विषय पर भी अनेक सुभाषितपद्य प्राप्त होते हैं।

सर्वप्रथम भाग्य की परिभाषा का अवलोकन करते हैं। शब्दकल्पद्रुमशब्दकोश में भाग्य की दो परिभाषाएँ दी गई हैं- *'प्राक्तनशुभाशुभकर्म्म'* और *'फलोन्मुखीभूतपूर्व्वदैहिकशुभाशुभं कर्म्म'*।[4]

तदनुसार पूर्व जन्म के वे शुभाशुभ कर्म जो इस जन्म में फल देने के लिए उन्मुख हुए हैं, वे ही भाग्य हैं। इस प्रकार भाग्य कर्म का ही एक विशेष विभाग है।

इसी बात को गोवर्धनपीठ के वर्तमान शङ्कराचार्य श्रीनिश्चलानन्द सरस्वती ने अपने प्रवचन में इस प्रकार स्पष्ट किया है- 'कर्म का एक विभाग है, जिसका नाम है प्रारब्ध। उस प्रारब्ध को भाग्य कहते हैं, दैव कहते हैं, अदृष्ट कहते हैं। कर्मविशेष का नाम होता है प्रारब्ध। अपने द्वारा पूर्वजन्मों में अनुष्ठित वे कर्म जो अन्तर्यामी सच्चिदानन्दस्वरूप सर्वेश्वर के संकल्प से फल देने के लिए उन्मुख हो जाते हैं, उनका नाम है प्रारब्ध, उसी को भाग्य कहते हैं, उसी को अदृष्ट कहते हैं।'[5]

शार्ङ्गधरपद्धति में भी पूर्वजन्म के कर्मों को भाग्य कहा गया है-

पूर्वजन्मजनितं कर्म दैवमिति संप्रचक्षते।[6]

योगवसिष्ठ ग्रन्थ के अनुसार भी अपने पहले किए हुए कर्मों के अतिरिक्त भाग्य और कुछ नहीं है- *प्राक्स्वकर्मेतराकारं दैवं नाम न विद्यते।*[7]

शुक्रनीति में भी पूर्वजन्म में किए गए कर्मों को भाग्य कहा गया है-

दैवे पुरुषकारे च खलु सर्वं प्रतिष्ठितम्।
पूर्वजन्मकृतं कर्मेहार्जितं तद् द्विधा कृतम्।।[8]

भाग्य की उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर भाग्य और दुर्भाग्य के भेद को इस प्रकार समझा जा सकता है कि पूर्वजन्म के शुभकर्म भाग्य हैं और अशुभकर्म दुर्भाग्य हैं।

भाग्य के ही पर्यायवाची शब्द ये भी हैं- दैव, दिष्ट, भागधेय, नियति, विधि, प्राक्तनकर्म, भवितव्यता, अदृष्ट आदि।[9]

भाग्य की उपर्युक्त परिभाषाओं और 'प्राक्तनकर्म' इस पर्यायवाची शब्द से यह स्पष्ट हो जाता है कि भाग्यवाद और कुछ नहीं, केवल कर्मसिद्धान्त का स्वीकार है कि शुभकर्म से अच्छे भाग्य और अशुभकर्म से ही बुरे भाग्य की प्राप्ति होती है।

कर्म अपने कर्ता का अनुगमन कभी नहीं त्यागता है। जिस प्रकार हजारों गायों के बीच में भी बछड़ा अपनी माता को ढूँढ लेता है, उसी प्रकार कर्म भी अपने कर्ता तक पहुँच जाता है।[10] अत: कर्मफल से कोई भी नहीं बच सकता है। स्वयं त्रिदेव ब्रह्मा-विष्णु-महेश और सूर्य भी कर्म से बँधे हुए हैं-

ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितो ब्रह्माण्डभाण्डोदरे
विष्णुर्येन दशावतारगहने क्षिप्त: सदा सङ्कटे।
रुद्रो येन कपालपाणिपुटके भिक्षाटनं कारित:
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगने तस्मै नम: कर्मणे।।[11]

कर्मों का फल अवश्य ही भोगना पड़ता है, इस विषय में यह अत्यन्त प्रसिद्ध श्लोक है-

यादृशं कुरुते कर्म तादृशं फलमाप्नुयात्।
अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।।[12]

प्राणिमात्र को शुभाशुभ कर्म का फल मिलता ही है, इस बात को समर्थन करने वाली और भी सूक्तियाँ उपलब्ध होती हैं-

- *कर्म क: स्वकृतमत्र न भुङ्क्ते।*[13]
- *कर्मायत्तं फलं पुंसाम्।*[14]
- *जन्मान्तरकृतं हि कर्म फलमुपनयति पुरुषस्येह जन्मनि।*[15]
- *यथा बीजं तथा निष्पत्ति:।*[16]
- *य: कुरुते स भङ्क्ते।*[17]
- *ज्ञानोदयात्पराऽऽरब्धं कर्म ज्ञानान्न नश्यति।*
  अदत्त्वा स्वफलं लक्ष्यमुद्दिश्योत्सृष्टबाणवत्।।[18]
- *सुखस्य दु:खस्य न कोऽपि दाता परो ददातीति कुबुद्धिरेषा।*
  अहं करोमीति वृथाभिमान: स्वकर्मसूत्रग्रथितो हि लोक:।।[19]
- *येन येन यथा यद् यत् पुरा कर्म समीहितम्।*
  तत्तदेकतरो भङ्क्ते नित्यं विहितमात्मना।।[20]
- *जन्मान्तरार्जितशुभाशुभकृन्नराणां छायेव न त्यजति कर्मफलानुबन्ध:।*[21]
- *यस्माच्च येन च यथा च यदा च यच्च यावच्च यत्र च शुभाशुभमात्मकर्म।*
  तस्माच्च तेन च तथा च तदा च तच्च तावच्च तत्र च विधातृवशादुपैति।।[22]
- *नमस्यामो देवान्ननु हतविधेस्तेऽपि वशगा,*
  विधिर्वन्द्य: सोऽपि प्रतिनियतकर्मैकफलद:।
  फलं कर्मायत्तं यदि किममरै: किं च विधिना
- *नमस्तत्कर्मभ्यो विधिरपि न येभ्य: प्रभवति।।*[23]

इसी प्रकार शुभकर्मों से शुभफल या भाग्य की और अशुभकर्मों से अशुभफल या दुर्भाग्य की प्राप्ति प्रायश्चित्त के अभाव में होती ही है-

- *शुभेन कर्मणा सौख्यं दु:खं पापेन कर्मणा।*
  कृतं फलति सर्वत्र नाकृतं भुज्यते क्वचित्।।[24]
- *भद्रकृत् प्राप्नुयात् भद्रमभद्रं चाप्यभद्रकृत्।*[25]
- *भाग्यानि पूर्वतपसा किल सञ्चितानि काले फलन्ति पुरुषस्य यथैव वृक्षा:।*[26]
- *पुराकृतकर्मणा पतति राहुमुखे खलु चन्द्रमा:।*[27]
- *अयि खलु विषम: पुराकृतानां भवति हि जन्तुषु कर्मणां विपाक:।*[28]
- *आत्मकृतानां हि दोषाणां नियतमनुभवितव्यं फलमात्मनैव।*[29]
- *ऋणं कृतं त्वदत्तं चेद् बाधतेऽत्र परत्र च।*
  न नश्येद् दुष्कृतं तद्वद् भुक्तिं वा निष्कृतिं विना।।[30]
- *न चिरात् प्राप्यते लोके पापानां कर्मणां फलम्।*
  सविषाणमिवान्नानां भुक्तानां क्षणदाचार।।[31]

किसी के व्याधिजन्य दु:ख भी प्रारब्धकर्म के फल होते हैं-

वैद्या: वदन्ति कफपित्तमरुद्विकारान् ज्योतिर्विदो ग्रहगतिं परिवर्तयन्ति।
भूताभिषङ्ग इति भूतविदो वदन्ति प्रारब्धकर्म बलवन्मुनयो वदन्ति।।[32]

इस प्रकार भाग्य-दुर्भाग्य के प्रति अपने ही कर्मों को उत्तरदायी मानकर मनुष्य को इस कर्मयोनि में शुभकर्म ही करने चाहिए, ताकि उसे अनिष्टफल न भोगने पड़े। फिर भी ऐसा न करने वाला मनुष्य तो हतभाग्य ही है-

प्राप्येमां कर्मभूमिं न चरति मनुजो यस्तपो मन्दभाग्य:।[33]

शुभकर्मों के फलस्वरूप उत्पन्न भाग्य से ही मनुष्य आपदाओं में भी सुरक्षित रहता है-

वने रणे शत्रुजलाग्निमध्ये महार्णवे पर्वतमस्तके वा।
सुप्तं प्रमत्तं विषमस्थितं वा रक्षन्ति पुण्यानि पुराकृतानि।।[34]

पूर्वकाल में विपुल शुभकर्म करने वाले व्यक्ति के लिए विषम परिस्थितियाँ भी सम हो जाती हैं और वह सर्वत्र अनुकूलता का अनुभव करता है-

भीमं वनं भवति तस्य पुरं प्रधानं सर्वो जन: सुजनतामुपयाति तस्य।
कृत्स्ना च भूर्भवति सन्निधिरत्नपूर्णा यस्यास्ति पूर्वसुकृतं विपुलं नरस्य।।[35]

भाग्य की अनुकूलता की स्थिति में अनिष्ट से भी इष्टप्राप्ति हो जाती है। भगवान् शिव विष पीकर भी तत्काल मृत्युञ्जय बन गए।[36] इसी प्रसङ्ग में साँप और कपोत-परिवार के दो और दृष्टान्त प्राप्त होते हैं, जहाँ भाग्यवश प्रतिकूल परिस्थितियाँ भी अनुकूल बन गई-

- *भग्नाशस्य करण्डपिण्डिततनोर्म्लानेन्द्रियस्य क्षुधा,*
  कृत्वाखुर्विवरं स्वयं निपतितो नक्तं मुखे भोगिन:।

तृप्तस्तत्पिशितेन सत्वरमसौ तेनैव यातः पथा
लोकाः पश्यत दैवमेव हि नृणां वृद्धौ क्षये कारणम्।।[37]

- *कान्तं वक्ति कपोतिकाकुलतया नाथान्तकालोऽधुना,*
  व्याधोऽधो धृतचापसज्जितशरः श्येनः परिभ्रामति।
  इत्थं सत्यहिना स दष्ट इषुणा श्येनोऽपि तेनाहत–
  स्तूर्णं तौ यमालयं प्रति गतौ दैवी विचित्रा गतिः।।[38]

भाग्यशाली व्यक्ति के लिए सर्वत्र सुखोपलब्धि हो जाती है–

क्व भोगमाप्नोति न भाग्यभाक् जनः।[39]

भाग्य की प्रबलता होने पर आलसी व्यक्ति भी लक्ष्मीसम्पन्न बन जाता है–

सर्वाङ्गमर्पयन्ती लीलासुप्तं क्रमेण शय्यायाम्।
अलसमपि भाग्यवन्तं भजते पुरुषायितेव श्रीः।।[40]
केषाञ्चिन्निजवेश्मनि स्थितवतामालस्यवश्यात्मनां
दृश्यन्ते फलिता लता इव चिरं सम्पन्नशाखाश्रियः।[41]

भाग्य की प्रबलता के कारण ही निम्नांकित श्लोक में किसी स्त्री से भाग्यशाली पुत्रों को जन्म देने की कामना की गई है–

भाग्यवन्तं प्रसूयेथा मा शूरं मा च पण्डितम्।
शूराश्च कृतविद्याश्च वने सीदन्ति पाण्डवाः।।[42]

इस प्रकार भाग्य, विद्या और पुरुषार्थ से भी बढ़कर है। कहा भी गया है–

भाग्यं फलति सर्वत्र न विद्या न च पौरुषम्।
समुद्रमन्थनाल्लेभे हरिर्लक्ष्मीं हरो विषम्।।[43]

पुरुषार्थ की सफलता भाग्य की सहायता पर आश्रित रहती है–

पुरुषः पौरुषं तावद्यावद्दैवं तु सन्मुखम्।
विपरीतगते दैवे पुरुषो न च पौरुषम्।।[44]
दैवमेव हि साहाय्यं कुरुते सत्त्वशालिनाम्।[45]
सुसत्त्वानां साहाय्यं भजते विधिः।[46]

पुनश्च पौरुष की अधिकता होने पर भी सिंह पर्वत–गुफाओं और जंगलों में भटकता रहता है जबकि बिल्ली भाग्य की प्रबलता से राजमहलों में निवास करती है।[47] अर्जुन और 'काबा' नामक ग्वाले के प्रसङ्ग से भी पुरुषार्थ की अपेक्षा भाग्य की प्रबलता स्पष्ट होती है–

स एवामी बाणस्तदपि हरलब्धं धनुरिदं
स एवाहं पार्थः प्रमथितसुरारातिनिचयः।
इमास्तास्ता गोप्यो हरिचरणचित्तैकशरणा
ह्रियन्ते गोपालैर्विधिरिह बलीयान्न तु नरः।।[48]

और भी सूक्तियाँ है, जो पुरुषार्थ की अपेक्षा भाग्य की प्रबलता को सिद्ध करती हैं–

- *दिष्टमेव ध्रुवं मन्ये पौरुषं तु निरर्थकम्।*[49]
- *दैवं हि बलवत्तरम्।*[50]
- *दैवमेव परं मन्ये नान्वनर्थं हि पौरुषम्।*[51]
- *दैव विनाऽपि प्रयत्नं करोति यद् तद् विफलम्।*[52]

पुरुषार्थ के द्वारा भाग्य को नहीं बदला जा सकता है, इस विषय में निम्नलिखित सूक्तियाँ प्राप्त होती हैं–

- *दैवं पुरुषकारेण को निवर्तितुमुत्सहेत्।*[53]
- *दैवं पुरुषकारेण न शक्यमपि बाधितुम्।*[54]
- *न हि शक्यं दैवमन्यथाकर्तुमभियुक्तेनापि।*[55]

हालाँकि भाग्य की अपेक्षा पुरुषार्थ को अधिक प्रबल बताने वाली सूक्तियाँ भी प्राप्त होती हैं–

- *मूढैः प्रकल्पितं दैवं तत्परास्ते क्षयं गताः।*
  प्राज्ञास्तु पौरुषार्थेन पदमुत्तमतां गताः।।[56]
- *ये समुद्योगमुत्सृज्य स्थिता दैवपरायणाः।*
  ते धर्ममर्थं कामञ्च नाशयन्त्यात्मविद्विषः।।[57]
- *विहाय पौरुषं यो हि दैवमेवावलम्बते।*
  प्रासादसिंहवत् तस्य मूर्ध्नि तिष्ठन्ति वायसाः।।[58]
- *उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीर्दैवं हि दैवमिति कापुरुषा वदन्ति।*
  दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोऽत्र दोषः।।[59]
- *उद्यमेन विना राजन् न सिद्ध्यन्ति मनोरथाः।*
  कातरा इति जल्पन्ति यद् भाव्यं तद् भविष्यति।[60]
- *न दैवमिति संचिन्त्य त्यजेदुद्योगमात्मनः।*
  अनुद्यमेन कस्तैलं तिलेभ्यः प्रासुमर्हति।।[61]
- *यत्नं विना रत्नं न लभ्यते।*[62]
- *प्राप्यते कर्मणा सर्वं न दैवादकृतात्मना।*[63]

भाग्य और पुरुषार्थ को अलग–अलग प्रबल बताने वाले उपर्युक्त दो मतों के अतिरिक्त तीसरा मत भी मिलता है, जिसके अनुसार किसी सफलता या इष्टप्राप्ति हेतु भाग्य और पुरुषार्थ दोनों का पारस्परिक संयोग अपेक्षित होता है। भाग्य के बिना केवल पुरुषार्थ सिद्धि नहीं दे पाता है और पुरुषार्थ के बिना केवल भाग्य सिद्धि नहीं दे पाता है–

- *न हि दैवेन सिध्यन्ति कार्याण्येकेन सत्तम।*
  न चापि कर्मणैकेन द्वाभ्यां सिद्धिस्तु योगतः।।[64]
- *हीनं पुरुषकारेण यदि दैवेन वा पुनः।*

कारणाभ्यामथैताभ्यामुत्थानमफलं भवेत्।।[65]

- *दैवं पुरुषकारश्च स्थितावन्योन्यसंश्रयात्।*[66]
- *यथा बीजं विना क्षेत्रमुप्तं भवति निष्फलम्।*
  तथा पुरुषकारेण विना दैवं न सिध्यति।।[67]
- *नालम्बते दैष्टिकतां न निषीदति पौरुषे।*
  शब्दार्थौ सत्कविरिव द्वयं विद्वानपेक्षते।।[68]
- *कर्मसमायुक्तं दैवं साधु विवर्धते।*[69]
- *न दैवमकृते किञ्चिद् कस्यचिद् दातुमर्हति।*[70]
- *कृती सर्वत्र लभते प्रतिष्ठां भाग्यसंयुताम्।*[71]
- *दैवे पुरुषकारे च खलु सर्वं प्रतिष्ठितम्।*[72]
- *अनुकूले यदा दैवे क्रियाऽल्पा सुफला भवेत्।*[73]

लोकव्यवहार की दृष्टि से भाग्यपुरुषार्थविषयक उपर्युक्त तीसरा मत ही अधिक युक्तियुक्त प्रतीत होता है। मत्स्यपुराण में भाग्य और पुरुषार्थ के साथ समय का संयोग भी सिद्धिप्राप्ति हेतु आवश्यक माना गया है–

दैवं पुरुषकारश्च कालश्च पुरुषोत्तम।
त्रयमेतन्मनुष्यस्य पिण्डितं स्यात् फलावहम्।।[74]

किन्हीं दो या दो से अधिक तुल्ययोग्यता वाले व्यक्ति या वस्तुओं में भाग्यशाली ही यश और ऐश्वर्य को प्राप्त कर पाता है। इसी बात को सुभाषितसर्वस्व में दो पत्थरों के दृष्टान्त से समझाया गया है। दो समान आकृति, मजबूती और आकृति वाले पत्थर एक ही खदान से प्राप्त हुए हैं। दोनों पर टङ्कणकला भी समानरूप से की जा सकती है। फिर भी उनमें से एक भाग्यवशात् देवालय में मूर्तिरूप में स्थापित हुआ, जिसे सभी नमन करते हैं और दूसरा उसी देवालय में देहली के स्थान पर लगाया गया, जिस पर सभी पादनिक्षेप करते हैं। [75]

इसके अतिरिक्त कम योग्यता वाला भी भाग्य की प्रबलता होने पर अधिक योग्यता वाले से ज्यादा सम्पन्न और सुखी होता है। कोयल को मधुर स्वर का गुञ्जन करने पर भी लोग बदले में कुछ नहीं देते हैं और उसे आम के ताजा पत्तों को खाकर जीवित रहना पड़ता है जबकि कटुस्वरालापी कौए को लोग बलिभोज देते हैं।[76] इसी प्रकार कान छिद्रयुक्त और टेढ़ा होने पर भी आभूषण धारण करता है जबकि आँख के निर्मल होने पर भी काजल ही लगाया जाता है।[77]

इस प्रकार भाग्य के कारण गुण भी दोष हो जाता है और दोष भी गुण हो जाता है।[78] भाग्य की इस प्रकार की विचित्रता के कारण ही फलप्राप्ति भाग्याधीन मानी गई है–

करोतु नाम नीतिज्ञः व्यवसायमितस्ततः।
फलं तदेव नियतं यद्विधेः मनसि स्थितम्।।[79]

व्यक्ति भाग्य के अतिरिक्त और किसी से भी फल प्राप्त नहीं कर सकता है। सर्वत्र भाग्य ही फल देता है–

आरोहतु गिरिशिखरं समुद्रमुल्लङ्घ्य यातु पातालम्।
विधिलिखिताक्षरमालं फलति कपालं न भूपालः।।[80]

साथ ही भाग्य से निष्पन्न होने वाली यह फलप्राप्ति की घटना बड़ी अद्भुत होती है–

द्वीपादन्यस्मादपि मध्यादपि जलधेर्दिशोऽप्यन्तात्।
आनीय झटिति घटयति विधिरभिमतमभिमुखीभूतः।।[81]

इसलिए कहा गया है कि घटित होने वाली जिस घटना के बारे में मनुष्य सोच भी नहीं सकता, उसे भाग्य घटित कर देता है।[82] वाल्मीकि मुनि ने भी कहा है कि जिसके बारे में कुछ भी न सोचा जा सकता हो, वही भाग्य का विधान है–

यदचिन्त्यं तु तद् दैवम्।[83]

भाग्य की यह विचित्रता इस पद्य में भी द्रष्टव्य है–

अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितं सुरक्षितं दैवहतं विनश्यति।
जीवत्यनाथोऽपि वने विसर्जितः कृतप्रयत्नोऽपि गृहे विनश्यति।।[84]

इस प्रकार भाग्य बने कार्य को भी बिगाड़ सकने में समर्थ है और असम्भव कार्य को भी सम्भव बना सकता है। [85]

साथ ही भाग्य रूप के विधान को कोई भी नहीं बदल सकता है। उसका विधान अनिवार्य है। एतद्विषयक कुछ प्रसिद्ध सूक्तियाँ इस प्रकार है–

- *अभद्रं भद्रं वा विधिलिखितमुन्मूलयति कः।*[86]
- *यत्पूर्वं विधिना ललाटलिखितं तन्मार्जितुं कः क्षमः।*[87]
- *अनतिक्रमणीयो हि विधिः।*[88]
- *को दैवलिखितं भोगं लङ्घयेत्।*[89]
- *शक्तो न कोऽपि भवितव्यताविलङ्घनायाम्।*[90]

यही भाग्य जब अनिष्टफलदायी होता है तो दुर्भाग्य नाम से व्यवहृत होता है। दुर्भाग्य के विविध आयामों को विवेचित करने वाली भी अनेक सूक्तियाँ और सुभाषित–पद्य प्राप्त होते हैं।

अस्तु, इस शोधपत्र के माध्यम से भाग्य की विविध विशेषताओं, भाग्य–सम्प्राप्ति के कारण, भाग्य और पुरुषार्थ की अन्योन्याश्रितता, भाग्य की अनिवार्यता इत्यादि विषयों पर प्रकाश डाला गया है।

संदर्भ सूची –

1 सुभाषिरत्नभाण्डागार, 29.1
2 विदुरनीति, 2.33
3 बलदेव उपाध्याय : संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृ. 314
4 शब्दकल्पद्रुम, भाग्य

5 https://youtube/WdMSjkaztro
6 शाङ्गर्धरपद्धति, 458
7 योगवसिष्ठ, 2.6.4
8 शुक्रनीति, 1.49
9 शब्दकल्पद्रुम, भाग्य
10 चाणक्यनीतिदर्पण, 13.14
11 नीतिशतक, 96
12 देवीभागवतपुराण, 6.9.67
13 नैषधीयचरित, 5.16
14 चाणक्यनीतिदर्पण, 13.17
15 कादम्बरी, पूर्वभाग, पृ. 193
16 चाणक्यसूत्र, 458
17 विश्व सूक्ति कोश, पृ. 214
18 अध्यात्मोपनिषद्, 53
19 अध्यात्मरामायण, 2.6.6
20 महाभारत, शान्तिपर्व, 181.10
21 सुभाषिरत्नभाण्डागार, 92.73
22 पंचतन्त्र, 2.20
23 नीतिशतक, 95
24 महाभारत, अनुशासनपर्व, 6.10
25 कथासरित्सागर, 3.6
26 नीतिशतक, 97
27 सुभाषिरत्नभाण्डागार, 92.69
28 भोजप्रबन्ध, 306
29 कादम्बरी, पूर्व भाग, पृ. 367
30 विश्व सूक्ति कोश, पृ. 214
31 रामायण, अरण्यकाण्ड, 29.9
32 वैद्यकीयसुभाषितसाहित्य, 31.18
33 नीतिशतक, 101
34 वही, 98
35 वही, 93
36 सुभाषितरत्नभाण्डागार, 91.40
37 नीतिशतक, 85
38 सुभाषितरत्नभाण्डागार, 95.124
39 नैषधीयचरित, 1.102
40 सुभाषिरत्नभाण्डागार, 91.43
41 सुभाषितसर्वस्व, 2.22.1
42 शार्ङ्गधरपद्धति, 442
43 सुभाषितसर्वस्व, 2.22.5
44 सुभाषिरत्नभाण्डागार, 91.29
45 कथासरित्सागर, 3.4.311
46 वही, 7.1.52
47 सुभाषिरत्नभाण्डागार, 93.80
48 वही, 93.93
49 महाभारत, उद्योगपर्व, 40.32
50 वही, कर्णपर्व, 36.57
51 वही, द्रोणपर्व, 9.20
52 चाणक्यसूत्र, 99
53 महाभारत, उद्योगपर्व, 186.18
54 वही, आश्रमवासिक पर्व 10.29
55 कादम्बरी, पूर्वभाग, पृ. 193
56 योगवासिष्ठ, 2.8.16
57 वही, 2.7.3
58 शार्ङ्गधरपद्धति, 456
59 वही, 455
60 विश्व सूक्ति कोश, पृ. 744
61 शार्ङ्गरधरपद्धति, 457
62 प्रीतिप्रभा गोयल : संस्कृत लोकोक्ति कोश, पृ. 117
63 महाभारत, अनुशासनपर्व, 6.12
64 महाभारत, सौप्तिकपर्व, 2.3
65 वही, 2.19
66 शांतिपर्व, 139.82
67 वही, अनुशासनपर्व, 6.7
68 शिशुपालवध, 2.88
69 वही, पृ. 6.43
70 सुभाषितरत्नभाण्डागार, 91.45
71 महाभारत, अनुशासनपर्व, 6.11
72 शुक्रनीति, 1.49
73 शुक्रनीति, 1.57
74 मत्स्यपुराण, 220.8
75 सुभाषितसर्वस्व, 1.64.12
76 सुभाषिरत्नभाण्डागार, 94.105
77 सुभाषितावलि, 3156
78 सुभाषितरत्नभाण्डागार, 92.24
79 सुभाषितसर्वस्व, 2.22.2
80 महासुभाषितसंग्रह, 5244
81 रत्नावली, 1.7
82 सुभाषिरत्नभाण्डागार, 91.36
83 रामायण, अयोध्याकाण्ड, 22.20
84 पंचतन्त्र, 1.20
85 महासुभाषितसंग्रह, 3347
86 सुभाषिरत्नभाण्डागार, 93.91
87 नीतिशतक, 94
88 स्वप्नवासवदत्त, अङ्क 4
89 कथासरित्सागर, 7.6.31
90 राजतरङ्गिणी, 8.2280